आचार्य नेमिचंद्र सिद्धांत-चक्रवर्ती विरचित

ज्ञान मार्गणा

Presentation Developed By: श्रीमति सारिका छाबड़ा

www.JainKosh.org

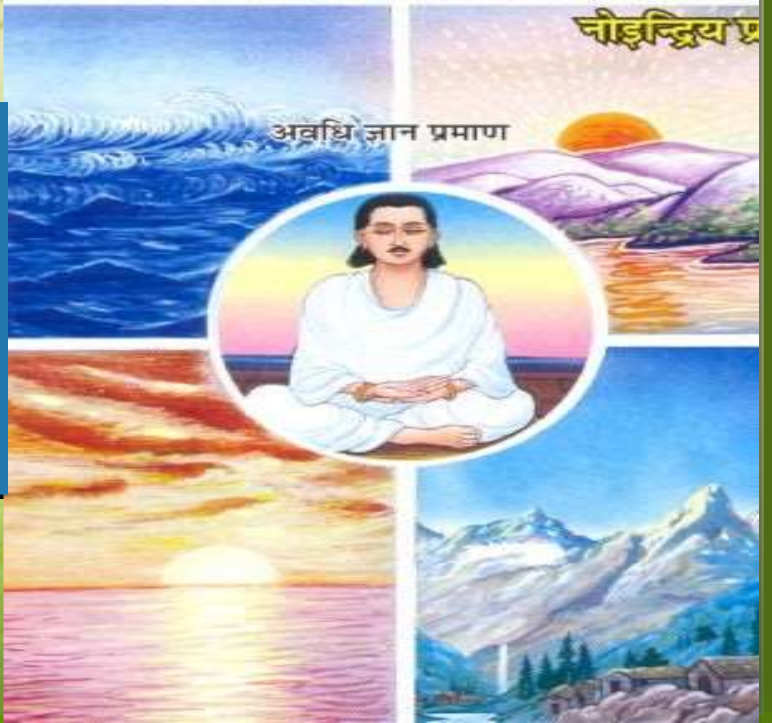

जाणइ तिकालविसए, दव्वगुणे पज्जए य बहुभेदे।
पच्चक्खं च परोक्खं, अणेण णाणं ति णं बेंति॥299॥

- अर्थ - जिसके द्वारा जीव त्रिकाल विषयक भूत, भविष्यत्, वर्तमान काल संबंधी समस्त द्रव्य और उनके गुण तथा उनकी अनेक प्रकार की पर्यायों को जाने उसको ज्ञान कहते हैं।
- इसके दो भेद हैं – प्रत्यक्ष, परोक्ष ॥299॥

जिसके द्वारा जीव

भूत	भविष्य	वर्तमान काल सम्बन्धी

समस्त द्रव्य

उनके गुण	उनके अनेक प्रकार की पर्यायों को

जाने

उसे ज्ञान कहते हैं

नोट : ज्ञान की पूर्ण विकसित पर्याय का भी यही स्वरूप है ।

ज्ञान किसे कहते हैं?

कर्तृ साधन	• जो जानता है
करण साधन	• जिसके द्वारा जाना जाता है
भाव साधन	• जानना मात्र

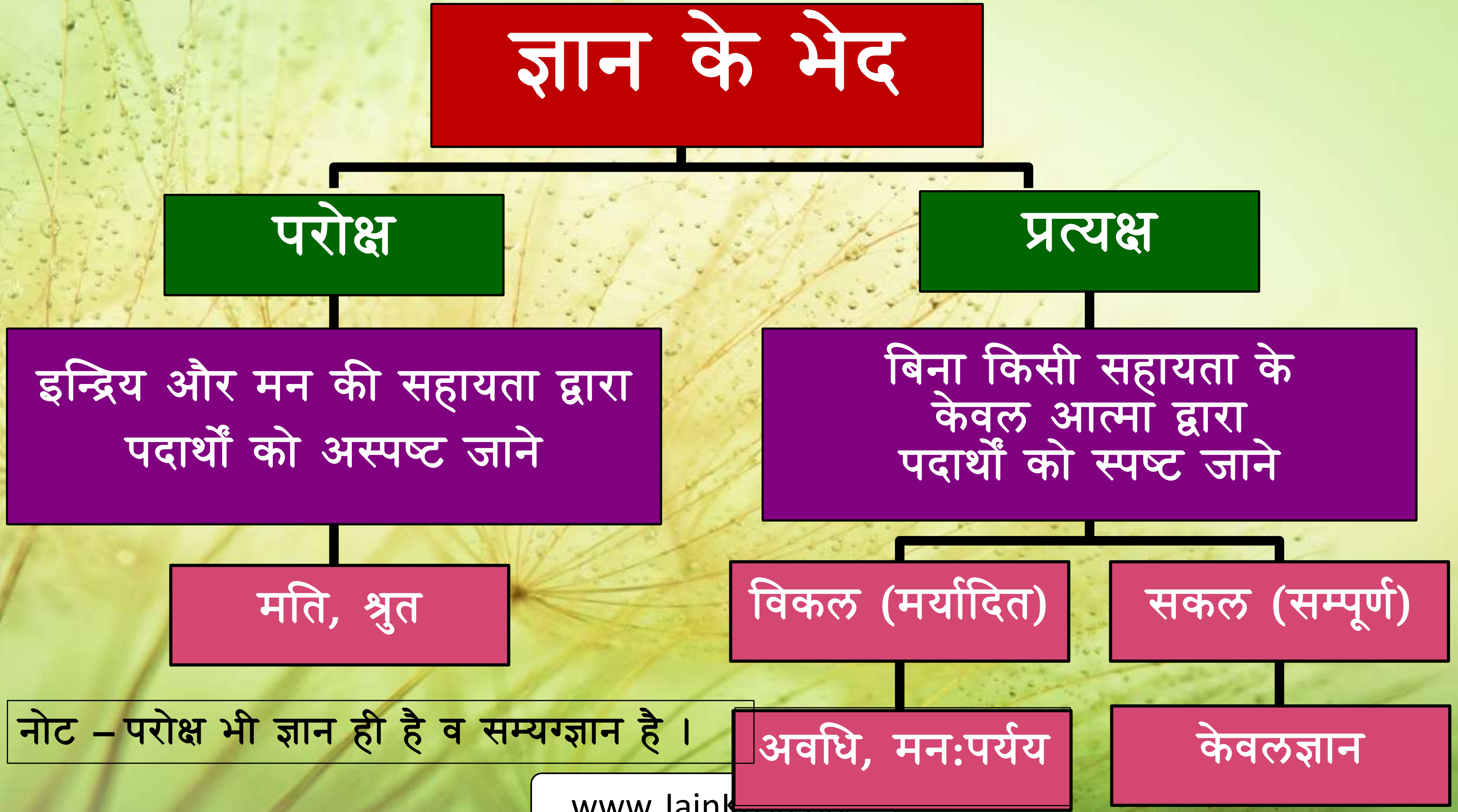

नोट – परोक्ष भी ज्ञान ही है व सम्यग्ज्ञान है ।

www.JainKosh.org

पंचेव होंति णाणा, मदिसुदओहीमणं च केवलयं ।
खयउवसमिया चउरो, केवलणाणं हवे खइयं ॥300॥

- अर्थ: ज्ञान के पाँच भेद हैं - मति, श्रुत, अवधि, मन:पर्यय तथा केवल ।
- इनमें आदि के चार ज्ञान क्षायोपशमिक हैं और केवलज्ञान क्षायिक है ॥300॥

www.JainKosh.org

क्षायिक ज्ञान

- जो ज्ञान कर्म के क्षय से उत्पन्न हो, उसे क्षायिक ज्ञान कहते हैं ।
- यह आवरण रहित ज्ञान है।

क्षायोपशमिक ज्ञान

- सर्वघाति स्पर्धकों के उदयाभावी क्षय, उन्हीं के सदवस्थारूप उपशम तथा देशघाती स्पर्धकों के उदय से होने वाला ज्ञान क्षायोपशमिक ज्ञान कहलाता है।
- यह आवरण सहित ज्ञान है।

अण्णाणतियं होदि हु, सण्णाणतियं खु मिच्छअणउदये।
णवरि विभंगं णाणं, पंचिंदियसण्णिपुण्णेव॥301॥

❖अर्थ - आदि के तीन (मति, श्रुत, अवधि) ज्ञान समीचीन भी होते हैं और मिथ्या भी होते हैं।

❖ज्ञान के मिथ्या होने का अंतरंग कारण मिथ्यात्व तथा अनंतानुबंधी कषाय का उदय है।

❖मिथ्या-अवधि को विभंग भी कहते हैं। इसमें यह विशेषता है कि यह विभंगज्ञान संज्ञी पर्याप्त पंचेन्द्रिय के ही होता है ॥301॥

www.JainKosh.org

मति, श्रुत, अवधिज्ञान के प्रकार

	मिथ्या	सम्यक् (समीचीन)
कारण / निमित्त	मिथ्यात्व और अनंतानुबंधी का उदय	सम्यक् श्रद्धा
स्वामी	कुमति-कुश्रुत– एकेन्द्रिय से संज्ञी पर्याप्त-अपर्याप्त कुअवधि (विभंग)– संज्ञी पर्याप्त	संज्ञी — पर्याप्त अथवा निर्वृत्त्यपर्याप्त
गुणस्थान	1 - 2	4 - 12

sh.org

मिस्सुदये सम्मिस्सं, अण्णाणतियेण णाणतियमेव।
संजमविसेससहिए, मणपज्जवणाणमुद्दिट्ठं॥302॥

- अर्थ - मिश्र प्रकृति के उदय से आदि के तीन ज्ञानों में समीचीनता तथा मिथ्यापना दोनों ही पाये जाते हैं, इसलिये इस तरह के इन तीनों ही ज्ञानों को मिश्रज्ञान कहते हैं।
- जिनके विशेष संयम होता है उन्हीं के मनःपर्यय ज्ञान होता है ॥302॥

www.JainKosh.org

मिश्र ज्ञान

कारण (निमित्त)

सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति का उदय

स्वामी

मिश्र गुणस्थानवर्ती

मन:पर्ययज्ञान के स्वामी

6ठे से 12वें गुणस्थानवर्ती महामुनिराज

तप विशेष द्वारा वृद्धिरूप विशुद्धता के धारी

विसजंतकूडपंजर-बंधादिसु विणुवएसकरणेण।
जा खलु पवट्टइ मई, मइअण्णाणं ति णं बेंति॥303॥

- अर्थ - दूसरे के उपदेश के बिना ही विष, यन्त्र, कूट, पिंजर तथा बंध आदिक के विषय में जो बुद्धि प्रवृत्त होती है उसको मत्यज्ञान कहते हैं ॥303॥

- नोट: मति + अज्ञान = मत्यज्ञान

जो बुद्धि

विष, यन्त्र, कूट, पिंजर तथा बंध आदिक के विषय में

बिना उपदेश स्वयं ही	उपदेश द्वारा

प्रवृत्त होती है, उसे

कुमतिज्ञान	कुश्रुतज्ञान

कहते हैं ।

www.JainKosh.org

विष

- जिसके खाने से जीव मर जाए

यंत्र

- भीतर पैर रखते ही जिसके किवाड़ बंद हो जाए
- जिसके द्वारा बकरी आदि को बाँधकर सिंहादि को पकड़ा जाता है

कूट

- लकड़ी आदि के बने
- जिससे चूहे आदि पकड़े जाते हैं

www.JainKosh.org

पिंजर

• रस्सी में गाँठ लगाकर जो जाल बनाया जाता है

• जिससे हिरण, तीतर आदि पकड़े जाते हैं

बंध

• गड्ढे आदिक बनाना

• हाथी आदि को पकड़ने के लिए

आभीयमासुरक्खं, भारहरामायणादिउवएसा।
तुच्छा असाहणीया, सुयअण्णाणं ति णं बेंति॥304॥

❖अर्थ - चौरशास्त्र, तथा हिंसाशास्त्र, भारत, रामायण आदि के परमार्थशून्य; अतएव अनादरणीय उपदेशों को मिथ्या-श्रुतज्ञान कहते हैं ॥304॥

कुश्रुत / मिथ्याश्रुतज्ञान

आभीत	• चौरादिक का शास्त्र
असुरक्ष	• चोरों से रक्षा कैसे हो ऐसा राजादि का शास्त्र
भारत	• पंच-भर्तार आदि के विपरीत कथन पाए जाए (महाभारत)
रामायण	• राम की वानर सेना, रावण राक्षस था आदि इच्छानुसार रचा शास्त्र
आदि	• हिंसा, यज्ञादि के पोषक एकांत शास्त्र

तुच्छा (परमार्थ से रहित)

www

असाधनीया (प्रमाण करने योग्य नहीं)

यहाँ कुमति-कुश्रुतज्ञान का वर्णन उपदेश अपेक्षा किया है ।

सामान्यपने स्व-पर भेदविज्ञान रहित इन्द्रिय-मन का सर्व ज्ञान मिथ्याज्ञान है ।

विवरीयमोहिणाणं, खओवसमियं च कम्मबीजं च।
वेभंगो त्ति पउच्चइ, समत्तणाणीण समयम्हि॥305॥

- अर्थ - सर्वज्ञों के उपदिष्ट आगम में विपरीत अवधिज्ञान को विभंग कहते हैं।
- यह अवधिज्ञानावरण और वीर्यांतराय कर्म के क्षयोपशम से उत्पन्न होने से क्षायोपशमिक है तथा मिथ्यात्व आदि कर्म के बंध का बीज है ॥305॥

कुअवधिज्ञान (विभंगज्ञान)

परिभाषा

- द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की मर्यादा लिये
- रूपी पदार्थ हैं विषय जिसका
- ऐसा आप्तादि के विषय में विपरीत ग्रहण

शब्दार्थ

- वि = विशिष्ट जो अवधिज्ञान
- भंग = विपरीत भाव

निमित्त

- अवधिज्ञानावरण एवं वीर्यान्तराय का क्षयोपशम

कुअवधिज्ञान (विभंगज्ञान)

किसका निमित्त

- मिथ्यात्वादि कर्मबंध का एवं
- कदाचित् नरकादि गति में पूर्वभव सम्बन्धी दुराचार के दु:खफल को जानकर सम्यग्दर्शन-ज्ञानरूप धर्म का

भेद

1. भवप्रत्यय
2. गुणप्रत्यय

स्वामी

1.देव, नारकी

2.मनुष्य, तिर्यंच (द्रव्य संयमादिक गुणों द्वारा)

www.JainKosh.org

अहिमुहणियमियबोहण-माभिणिबोहियमणिंदि-इंदियजं। अवगहईहावाया-धारणगा होंति पत्तेयं॥306॥

- अर्थ - इन्द्रिय और अनिन्द्रिय (मन) की सहायता से अभिमुख और नियमित पदार्थ का जो ज्ञान होता है, उसको आभिनिबोधिक ज्ञान कहते हैं।
- इसमें प्रत्येक के अवग्रह, ईहा, अवाय, धारणा ये चार-चार भेद हैं ॥306॥

www.JainKosh.org

मतिज्ञान

इन्द्रिय और मन की सहायता द्वारा मूर्त और अमूर्त पदार्थों को जानना

आभिनिबोधिक ज्ञान
(इन्द्रिय और मन की सहायता के द्वारा होने वाला ज्ञान)

आभिनिबोधिक

- अभि + नि + बोध = अभिमुख + नियमित + ज्ञान

अभिमुख

- स्थूल, वर्तमान योग्य क्षेत्र में अवस्थित पदार्थ

नियमित

- जिस-जिस इन्द्रिय का जो-जो निश्चित विषय
- जैसे चक्षु का रूप

मतिज्ञान उत्पन्न होने के हेतु

5 इन्द्रिय

मन

अतः मतिज्ञान के 6 प्रकार हैं ।

प्रत्येक के ये चार भेद हैं ।

- मतिज्ञान
  - अवग्रह
    - 6
  - ईहा
    - 6
  - अवाय
    - 6
  - धारणा
    - 6

अतः मतिज्ञान के 6 (5 इन्द्रिय और मन) × 4 = 24 भेद हुए ।

वेंजणअत्थअवग्गह-भेदा हु हवंति पत्तपत्तत्थे।
कमसो ते वावरिदा, पढमं ण हि चक्खुमणसाणं॥307॥

- अर्थ - अवग्रह के दो भेद हैं - व्यञ्जनावग्रह एवं अर्थावग्रह।
- जो प्राप्त अर्थ के विषय में होता है, उसको व्यञ्जनावग्रह कहते हैं और जो अप्राप्त अर्थ के विषय में होता है, उसको अर्थावग्रह कहते हैं ।
- ये पहले व्यंजनावग्रह; पीछे अर्थावग्रह इस क्रम से होते हैं । तथा
- व्यंजनावग्रह चक्षु और मन से नहीं होता ॥307॥

अवग्रह के भेद

व्यंजनावग्रह		अर्थावग्रह	
अव्यक्त - अप्रकट	प्राप्त	व्यक्त - प्रकट	अप्राप्त
जैसे - नूतन मिट्टी के घड़े पर 1-2 बूंद व्यक्त नहीं	स्पर्श, रस, गंध, शब्द का स्पर्शित होना	अधिक बूंद पड़ने पर व्यक्त	स्पर्शित न होना

www.JainKosh.org

स्पर्शन, रसना, घ्राण, कर्ण इन्द्रिय द्वारा व्यंजनावग्रह होकर अर्थावग्रह होता है ।

चक्षु इन्द्रिय और मन द्वारा अर्थावग्रह होता है ।

अतः मतिज्ञान के भेद = 6 (इन्द्रिय-मन) × 4 (अवग्रहादि) + 4 (व्यंजनावाग्रह– स्पर्शन, रसना, घ्राण, कर्ण)
= 24 + 4 = 28

व्यंजनावाग्रह 4

+

अर्थावग्रह 6

+

ईहा 6

+

अवाय 6

+

धारणा 6

→ मतिज्ञान के 28 भेद

nKosh.org

विशेष

4 इन्द्रियाँ प्राप्यकारी हैं ।

- अर्थात् सामान्यतया पदार्थों से सन्निकर्ष (स्पर्श) करके ज्ञान होता है ।

चक्षु और मन अप्राप्यकारी हैं ।

- अर्थात् बिना पदार्थ के सन्निकर्ष के ही ज्ञान होता है ।

www.JainKosh.org

प्रश्न - शब्द, गंध आदि भी तो दूर रहते हैं । फिर भी इनका ज्ञान हो जाता है । तब इन्हें भी अप्राप्यकारी ही कहो ।

उत्तर- ऐसा नहीं है ।

शब्द, गंध आदि उत्पन्न होने पर समीपवर्ती स्कंध उस शब्द, गंधरूप होते हैं।

उनका सन्निकर्ष होता है, तब ज्ञान होता दिखाई देता है ।

अतः ये प्राप्यकारी भी हैं ।

विसयाणं विसईणं, संजोगाणंतरं हवे णियमा।
अवगहणाणं गहिदे, विसेसकंखा हवे ईहा॥308॥

- अर्थ - पदार्थ और इन्द्रियों का योग्य क्षेत्र में अवस्थानरूप सम्बन्ध होने पर सामान्य अवलोकन या निर्विकल्प ग्रहणरूप दर्शन होता है और
- इसके अनंतर विशेष आकार आदिक को ग्रहण करने वाला अवग्रह ज्ञान होता है।
- इसके अनंतर जिस पदार्थ को अवग्रह ने ग्रहण किया है, उसी के किसी विशेष अर्थ को जानने की आकांक्षारूप जो ज्ञान, उसको ईहा कहते हैं ॥308॥

किसी पदार्थ के संबंध में सर्वप्रथम दर्शनोपयोग होता है ।

कब ?

पदार्थ और इन्द्रियों का योग्य क्षेत्र में अवस्थान रूप संबंध होने पर ।

फिर

अवग्रह ज्ञान होता है ।

दर्शन

वस्तु के सत्तामात्र सामान्यरूप निर्विकल्प ग्रहण को दर्शन कहते हैं ।

अवग्रह ज्ञान

दर्शनोपयोग होने के पश्चात्

ज्ञेय पदार्थ के वर्ण, आकार, स्पर्श आदि

विशेष ग्रहण करने वाले ज्ञान को अवग्रह कहते हैं ।

दर्शन और अवग्रह में अंतर

दर्शन	अवग्रह
• इसमें जानना निर्विकल्प होता है । • जैसे उसी दिन जन्मे बालक के पहली बार नेत्र खोलने पर विशेषशून्य प्रतिभास । • दर्शनावरण कर्म का क्षयोपशम निमित्त होता है ।	• इसमें जानना सविकल्प होता है । • जैसे – यह रूप है, यह पुरुष है आदि रूप से जानना । • मतिज्ञानावरण कर्म का क्षयोपशम निमित्त होता है ।

ईहा ज्ञान

अवग्रह से गृहीत पदार्थ के

किसी विशेष अर्थ को

जानने की आकांक्षा होने पर

पदार्थ के निर्णय की ओर ढलता ज्ञान

ईहा ज्ञान कहलाता है ।

ईहा ज्ञान संशय, विपर्यय या अनध्यवसाय नहीं है ।

'ध्वज की पंक्ति है या बगुले की पंक्ति है' - ऐसा संशयज्ञान ईहा नहीं है ।

'ध्वज की पंक्ति को बगुले की पंक्ति जान लेना' - ऐसा विपर्यय ज्ञान ईहा नहीं है।

'कुछ होगा' - ऐसा अनध्यवसाय भी ईहा ज्ञान नहीं है ।

विशेष जानने की आकांक्षा होने पर वस्तु के सम्यक् अंश की ओर ढलता ज्ञान ईहा ज्ञान है ।

ईहणकरणेण जदा, सुणिण्णओ होदि सो अवाओ दु।
कालांतरे वि णिण्णिद-वत्थुसमरणस्स कारणं तुरियं॥309॥

- अर्थ - ईहा ज्ञान के अनंतर वस्तु के विशेष चिह्नों को देखकर जो उसका विशेष निर्णय होता है, उसको अवाय कहते हैं।
- जैसे भाषा, वेष, विन्यास आदि को देखकर ‘यह दाक्षिणात्य ही है’ इस तरह के निश्चय को अवाय कहते हैं।
- जिसके द्वारा निर्णीत वस्तु का कालान्तर में भी विस्मरण न हो उसको धारणा ज्ञान कहते हैं ॥309॥

अवाय ज्ञान

ईहा ज्ञान के अनंतर

वस्तु के विशेष चिह्नों को देखकर

वस्तु का सम्यक् प्रकार निर्णय करना

अवाय ज्ञान है ।

धारणा ज्ञान

निर्णीत वस्तु का कालांतर में भी स्मरण आने का कारणभूत ज्ञान धारणा ज्ञान है ।

जैसे - ऐसा याद रहना कि वह बगुलों की पंक्ति देखी थी ।

नोट - याद आना अलग विषय है ।
याद आना 'स्मृति' ज्ञान है । याद रहना धारणा ज्ञान है ।

अवग्रहादि चारों ज्ञान

स्वरूप	सर्वप्रथम जानना	इच्छा - अभिलाषा	निर्णय	भूलना नहीं
कालांतर में		संशय - विस्मरण हो जाता है	संशय तो नहीं, पर विस्मरण होता है	न संशय, न विस्मरण होता है
उदाहरण	कोई सफेद पदार्थ देखा	“ये बगुला है कि पताका” जानने की इच्छा हुई	पंख हिलने से जाना बगुला है	भविष्य में भूले नहीं

विशेष

- ईहा ज्ञान संशय रूप नहीं होता है क्योंकि यह प्रमाण ज्ञान है और संशय मिथ्याज्ञान स्वरूप होता है।
- यह 4 ज्ञान क्रम से उत्पन्न होते हैं अतः इसी क्रम से इन्हें बताया गया है।
- क्रम से होने पर भी आगे वाला ज्ञान नियम से हो ही, ऐसा जरुरी नहीं है।

बहु बहुविहं च खिप्पा-णिस्सिदणुत्तं धुवं च इदरं च।
तत्थेक्केक्के जादे, छत्तीसं तिसयभेदं तु॥310॥

- अर्थ - उक्त मतिज्ञान के विषयभूत पदार्थ के 12 भेद हैं–
- बहु, अल्प, बहुविध, एकविध या अल्पविध, क्षिप्र, अक्षिप्र, अनि:सृत, नि:सृत, अनुक्त, उक्त, ध्रुव, अध्रुव।
- इनमें से प्रत्येक विषय में मतिज्ञान के उक्त अट्ठाईस भेदों की प्रवृत्ति होती है, इसलिये बारह को अट्ठाईस से गुणा करने पर मतिज्ञान के तीन सौ छत्तीस भेद होते हैं ॥310॥

मतिज्ञान के विषयभूत पदार्थ के भेद

बहु	बहुविध	एक	एकविध
क्षिप्र	अक्षिप्र	अनिःसृत	निःसृत
अनुक्त	उक्त	ध्रुव	अध्रुव

इन्हीं 12 भेदों को कुल 28 भेदों से गुणा करने पर
$12 \times 28 = 336$ मतिज्ञान के भेद होते हैं ।

बहुवत्तिजादिगहणे, बहुबहुविहमियरमियरगहणम्हि।
सगणामादो सिद्धा, खिप्पादी सेदरा य तहा॥311॥

- अर्थ - बहुत व्यक्तियों को बहु कहते हैं।
- बहुत-सी जातियों को बहुविध कहते हैं।
- एक, दो व्यक्तियों को अल्प (एक) कहते हैं।
- एक, दो जातियों को एकविध (अल्पविध) कहते हैं ।
- क्षिप्रादिक तथा उनके प्रतिपक्षियों का अर्थ उनके नाम से ही सिद्ध है ॥311॥

मतिज्ञान के विषयभूत 12 प्रकार के पदार्थ

बहु

बहुत पदार्थ (संख्या वाचक)

गौरी, सांवली, काली आदि अनेक गाय

एक

एक-दो पदार्थ

एक गोरी गाय

www.JainKosh.org

बहुविध

बहुत प्रकार के पदार्थ (प्रकार वाचक)

गाय, भैंस, घोड़ा आदि अनेक जाति

एकविध

एक-दो प्रकार के पदार्थ

गोरी, सांवली, काली आदि गाय (एक जाति - गाय)

क्षिप्र

शीघ्र

शीघ्र पड़ती जलधारा या जलप्रवाह

अक्षिप्र

मंद

धीरे चलता कछुआ

अनि:सृत	नि:सृत
गूढ़	प्रकट
जल में डूबा हाथी	जल से निकला हाथी

अनुक्त

बिना कहा या अभिप्राय में वर्तमान

हाथ या शिर के इशारे से बिना कहे 'हाँ' या 'ना' समझना

उक्त

कहा हुआ

किसी ने कहा ''ये घड़ा है''

ainKosh

ध्रुव

अचल / बहुत काल स्थायी

पर्वतादि

अध्रुव

चंचल / विनाशीक

क्षणस्थायी बिजली आदि

श्रोत्र इंद्रिय संबंधी बहु आदि ज्ञान

बहु	• एक साथ तत, वितत, घन आदि शब्दों को सुनना
एक	• इनमें से किसी एक-दो शब्दों को ही सुनना
बहुविध	• तत, वितत, घन आदि के अनेकों प्रकारों को सुनना
एकविध	• किसी एक-दो प्रकारों को ही जानना
क्षिप्र	• शीघ्रता से कहे शब्द, वाक्य आदि को सुनना
अक्षिप्र	• मंदता से कहे शब्द, वाक्य आदि को सुनना अथवा धीरे धीरे सुनना

www.JainKosh.org

अनि:सृत	• पूरे वाक्य का उच्चारण ना होने पर भी जान लेना कि क्या कहा है
नि:सृत	• पूर्ण रूप से उच्चारित होने पर सुनना
अनुक्त	• एक भी शब्द का उच्चारण हुए बिना अभिप्राय मात्र से अर्थ को ग्रहण कर लेना
उक्त	• कहे गए शब्द को जान लेना
ध्रुव	• जैसा प्रथम समय में शब्द का ग्रहण हुआ वैसा ही द्वितीय आदि समयों में शब्द का ग्रहण करना | ना न्यून, ना अधिक |
अध्रुव	• कभी बहुत शब्दों को जानना, कभी अल्प को, कभी एकविध को, कभी बहुविध को इत्यादि रूप ज्ञान को अध्रुव कहते हैं |

नोट : पर-उपदेशपूर्वक शब्दों का ग्रहण उक्त है । जैसे 'यह गाय है' - यह सुनकर गाय का ज्ञान । स्वत: गाय को देखकर ज्ञान होना नि:सृत ज्ञान है ।

चक्षु इंद्रिय संबंधी बहु आदि ज्ञान

बहु	शुक्ल, कृष्ण, लाल, नीला आदि बहुत वर्णों का ज्ञान होना
एक	किसी एक-दो रंगों का जानना
बहुविध	अनेक प्रकार के रंगों का जानना
एकविध	एक दो-प्रकार के रंगों का जानना
क्षिप्र	शीघ्रता से गतिमान वर्णों का जानना
अक्षिप्र	मंदरूप परिणत वर्णों का जानना

www.JainKosh.org

अनि:सृत	वस्त्र के एक छोर के रंगों को देखकर पूरे वस्त्र के रंगों का ज्ञान हो जाना अथवा एक वस्त्र के एकदेश रंग को देखकर अन्यत्र स्थित वस्त्र के रंग का ज्ञान होना
नि:सृत	पूरे वस्त्र को देखकर वर्णों का जानना
अनुक्त	दूसरे के कहे बिना अभिप्राय मात्र से यह जान लेना कि इन रंगों के मिश्रण से यह रंग बनाएंगे
उक्त	कहे जाने पर रूप को ग्रहण करना
ध्रुव	जैसा प्रथम समय में रूप ग्रहण किया है वैसा ही द्वितीय आदि समय में भी जानना। ना न्यून, ना अधिक।
अध्रुव	कभी बहु रूप को जानना, कभी बहुविध को, कभी एक को, कभी एकविध को इत्यादि अध्रुव रूप से रूप को ग्रहण करता हुआ ज्ञान

www.JainKosh.org

वत्थुस्स पदेसादो, वत्थुग्गहणं तु वत्थुदेसं वा।
सयलं वा अवलंबिय, अणिस्सिदं अण्णवत्थुगई॥312॥

- अर्थ - वस्तु के एकदेश को देखकर समस्त वस्तु का ज्ञान होना, अथवा
- वस्तु के एकदेश या पूर्ण वस्तु का ग्रहण करके उसके निमित्त से किसी दूसरी वस्तु के होने वाले ज्ञान को भी अनि:सृत कहते हैं ॥312॥

अनि:सृत ज्ञान

वस्तु के

एकदेश को देखकर

सर्वांग को देखकर

समस्त वस्तु का ज्ञान

अन्य अप्रकट वस्तु का ज्ञान

अन्य अप्रकट वस्तु का ज्ञान

पुक्खरगहणे काले, हत्थिस्स य वदणगवयगहणे वा।
वत्थुंतरचंदस्स य, धेणुस्स य बोहणं च हवे॥313॥

- अर्थ - जल में डूबे हुए हस्ती की सूंड को देखकर उसी समय में जलमग्न हस्ती का ज्ञान होना, अथवा
- मुख को देखकर उस ही समय उससे भिन्न किन्तु उसके सदृश चन्द्रमा का ज्ञान होना, अथवा
- गवय को देखकर उसके सदृश गौ का ज्ञान होना –
- इनको अनि:सृत ज्ञान कहते हैं ॥313॥

अनि:सृत - उदाहरण

क्र.	उदाहरण	कौन-सा ज्ञान ?
1	जल में डूबे हाथी की सूंड देखकर हाथी का ज्ञान होना	अनुमान
2	मुख देखकर चन्द्रमा का ज्ञान	स्मृति / प्रत्यभिज्ञान
3	गवय को देखकर गौ का ज्ञान	स्मृति / प्रत्यभिज्ञान
4	अन्यथा अनुपपत्ति का ज्ञान – अग्नि नहीं तो धुआँ भी नहीं	तर्क

परोक्ष प्रमाण

मतिज्ञान				श्रुतज्ञान
स्मृति	प्रत्यभिज्ञान	तर्क	अनुमान	आगम
स्मरण	जोड़रूप ज्ञान	व्याप्ति का ज्ञान	साधन से साध्य	

इन सबका विषय अनि:सृत पदार्थ है

एक्कचउक्कं चउ वीसट्ठावीसं च तिप्पडिं किच्चा। इगिछव्वारसगुणिदे, मदिणाणे होंति ठाणाणि॥314॥

- अर्थ - मतिज्ञान सामान्य की अपेक्षा एक भेद,
- अवग्रह, ईहा, अवाय, धारणा की अपेक्षा चार भेद,
- पाँच इन्द्रिय और छठे मन से अवग्रहादि चार के गुणा करने की अपेक्षा चौबीस भेद,
- अर्थावग्रह और व्यंञ्जनावग्रह दोनों की अपेक्षा से अट्ठाईस भेद मतिज्ञान के होते हैं।
- इनको क्रम से तीन पंक्तियों में स्थापना करके इनका एक, छह और बारह के साथ यथाक्रम से गुणा करने पर मतिज्ञान के सामान्य, अर्ध और पूर्ण स्थान होते हैं ॥314॥

www.JainKosh.org

मतिज्ञान के भेद

मतिज्ञान के स्थान	सामान्य (पदार्थ)	अर्थ (बहु आदि 6)	पूर्ण (बहु आदि 12)
सामान्य अपेक्षा	1	6	12
अवग्रहादि अपेक्षा	4	24	48
इन्द्रिय और मन अपेक्षा (4 × 6)	24	144	288
अर्थावग्रह और व्यंजनावग्रह के भेद-सहित	28	168	336

- Reference : गोम्मटसार जीवकाण्ड, सम्यग्ज्ञान चंद्रिका, गोम्मटसार जीवकांड रेखाचित्र एवं तालिकाओं में
- Presentation created by : Smt. Sarika Vikas Chhabra
- For updates / feedback / suggestions, please contact
  - Sarika Jain, sarikam.j@gmail.com
  - ☎: 94066-82889
  - www.jainkosh.org